इकाई 2 उपयोग मूल्य और विनिमय मूल्य*

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 वस्तु या चीज

2.3 वस्तुओं का उपयोग मूल्य

2.4 वस्तुओं का विनिमय मूल्य

2.5 मूल्य का उद्‌गम और मूल्य रूप

2.6 वस्तुओं का जड़वस्तुवाद

2.7 वस्तुओं का परिचालन

2.8 अधिशेष मूल्य का सिद्धांत

2.9 सारांश

2.10 संदर्भ

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि

- पूँजीवादी समाज में वस्तु की संकल्पना का अर्थ स्पष्ट कर सकें;
- पूँजीवादी समाजों में विनिमय संबंधों के विकास के साथ सामाजिक संबंधों में परिवर्तनों पर चर्चा कर सकें;
- व्यक्तियों के बीच संबंध पर वस्तुओं के जड़वस्तुवाद का प्रभाव स्पष्ट कर सकें; तथा
- अधिशेष मूल्य संबंधी मार्क्स का सिद्धांत का खाका खींच सकें।

2.1 प्रस्तावना

समाजशास्त्र में 'मूल्य' से हमारा अभिप्राय होता है – किसी भी समाज अथवा संस्कृति में व्यक्तियों द्वारा व्यवहार में लाई जाने वाली स्वीकृत अथवा वांछित मान्यताएँ। विभिन्न व्यक्ति विभिन्न मान्यताओं को मान देने वाले हो सकते हैं; उदाहरण के लिए, हो सकता है कि कुछ व्यक्ति सहभाजन को मान देते हों जबकि अन्य व्यक्तिवाद को। समाजों, संस्कृतियों और कालावधियों में मूल्य भिन्नता दर्शा सकते हैं। दरअसल, प्राचीन काल से ही व्यक्ति सदैव कतिपय मान्यताओं अथवा धारणाओं को मान देते रहे हैं।

* चारु साहनी, स्वतंत्र विदुषी, नई दिल्ली द्वारा रचित।

जब कार्ल मार्क्स मूल्य का विश्लेषण करते हैं तो उनकी दृष्टि इस बात पर होती है कि पूँजीवादी समाज के आविर्भाव के साथ विनिमय के अधीन रखी गई 'वस्तुओं' के संबंध में मूल्य को अब किस प्रकार देखा जाता है। वह उन वस्तुओं की संकल्पना का सहारा लेकर मूल्य को अर्थशास्त्रीय शब्दों में देखते हैं जो 'उपयोग मूल्य' और 'विनिमय मूल्य' दोनों को साकार करते हैं। मार्क्स मूल्य को सारहीन मान्यताओं के शब्दों में नहीं वरन् किसी चीज या 'कमोडिटी' स्वरूप एक स्पर्श्य वस्तु के रूप में देखते हैं।

वर्ष 1849 में जिन दिनों मार्क्स लन्दन में थे, उन्होंने अपना अधिकांश समय अर्थशास्त्र के अध्ययन में ही व्यतीत किया और वर्ष 1867 में अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *कैपिटल* लिख डाली। कार्ल मार्क्स रचित *कैपिटल – वॉल्युम वन* का प्रथम अध्याय 'कमोडिटीज' अर्थात् वस्तुओं पर ही है। यह अध्याय एक पूँजीवादी समाज में वस्तु की संकल्पना के साथ–साथ उपयोग मूल्य और विनिमय मूल्य जैसे उससे संबद्ध कारकों पर भी सूक्ष्म दृष्टि डालता है। वस्तु संबंधी मार्क्स का विश्लेषण, दरअसल, एडम स्मिथ और डेविड रिकार्डो जैसे राजनीतिक अर्थशास्त्रियों के लेखों की समालोचना ही है। रिकार्डो के लेखों ने इंग्लैण्ड की आर्थिक नीतियों को काफी हद तक आकार दिया। वस्तु की संकल्पना संबंधी एक व्याख्या के माध्यम से मार्क्स पूँजीवादी समाज के आर्थिक सिद्धांतों की आलोचना करते हैं।

2.2 वस्तु या चीज

मार्क्स ने किसी पूँजीवादी समाज में वस्तु की संकल्पना का अध्ययन एक ऐसे आर्थिक उत्पाद के रूप में किया जो कि किसी भी सामाजिक संबंध व्यवस्था का परिणाम होता है। साथ ही, जैसे ही बाजार पूँजीवादी समाज में विकसित होता है, कोई भी वस्तु क्रय और विक्रय के अधीन हो जाती है। उत्पादन की पूँजीवादी रीति अपनाने वाले समाजों में वस्तुओं का अपरिमित संचय होता है।

किसी भी पूँजीवादी समाज की मूल इकाई कोई एकल वस्तु ही होती है। वस्तु, दरअसल, एक ऐसी चीज है जो मनुष्य के शरीर के बाहर स्थित होती है और मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। वस्तुओं के विभिन्न उदाहरण दिए जा सकते हैं, जैसे जूते, वस्त्र, रोटी, मक्खन आदि। नाना प्रकार की वस्तुएँ विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। कोई भी वस्तु अपनी मात्रा और गुणवत्ता दोनों दर्शाती है। किसी भी वस्तु का मूल्य सामाजिक रूप से आवश्यक श्रम अथवा उसका उत्पादन करने हेतु वांछित सामाजिक रूप से आवश्यक समय की मात्रा से निर्धारित होता है। उदाहरण के लिए, हीरे किसी भी अन्य वस्तु के मुकाबले अधिक मूल्यवान होते हैं क्योंकि वे पृथ्वी की सतह पर दुर्लभ हैं, और साथ ही, अपने उत्पादन में हीरों को अपेक्षाकृत अधिक श्रम समय की आवश्यकता होती है। किसी भी पूँजीवादी समाज में कोई भी वस्तु दो कारकों से सहबद्ध होती है – उपयोग मूल्य और विनिमय मूल्य। इसी प्रकार, श्रम जो किसी वस्तु में सन्निहित हो, अपना दोहरा अभिलक्षण भी दर्शाता है, यथा प्रयोज्य श्रम और अमूर्त श्रम।

2.3 वस्तुओं का उपयोग मूल्य

वस्तुएँ केवल उपयोग मूल्य दर्शाती हैं और किसी भी वस्तु का मूल्य तब सृजित होता है जब अमूर्त में प्रयोज्य श्रम उसमें समाविष्ट हो जाता है। मार्क्स के अनुसार, वस्तुओं

का उपयोग मूल्य दो तत्वों का बना होता है, यथा पदार्थ और श्रम। किसी भी वस्तु के उपयोग मूल्य का अर्थ होता है – किसी वस्तु की उपयोगिता अथवा वह मानवीय आवश्यकता जो कोई वस्तु विशेष पूरी करती हो। दूसरे शब्दों में, उपयोग मूल्य का अर्थ है – 'किसी व्यक्ति को कोई सेवा विशेष प्रदान करने हेतु किसी वस्तु की क्षमता' (मॉरिसन 1995: 60)। उदाहरण के लिए, जूते पाँवों की रक्षा करते हैं, वस्त्र तन को ढकते हैं, और रोटी व मक्खन क्षुधा शांत करते हैं। साथ ही, हर वस्तु किसी ऐसी विशिष्ट आवश्यकता की पूर्ति करती है जो कोई अन्य वस्तु नहीं कर सकती। ऐसा इसलिए है कि किसी भी वस्तु का प्रयोग उसके भौतिक गुणों के साथ–साथ उसकी गुणवत्ता से भी निर्धारित होता है।

कोई वस्तु किसी बाजार में खरीदी और बेची जा सकने वाली वस्तु न होने पर भी प्रयोज्य हो सकती है, जैसे वायु, जल, मृदा आदि (कैल्हॉन, मूडी, पैफ, श्मिट, एवं वर्क 2002: 47)। कोई चीज किसी वस्तु के रूप में न होकर भी मूल्यवान हो सकती है, प्रयोज्य हो सकती है और श्रम का उत्पाद हो सकती है। उदाहरण के लिए, वह किसान जो अपने परिवार के भरण–पोषण के लिए कृषि उत्पाद उत्पन्न करता है, उपयोग मूल्य प्रस्तुत करता है न कि कोई वस्तु। किसी भी वस्तु का उत्पादन करने के लिए व्यक्ति को किसी अन्य वस्तु पर प्रयोज्य श्रम व्यय करना होगा, उसे दूसरों के लिए उत्पन्न करना होगा और साथ ही, उसे विनिमय के अधीन लाना होगा। इसीलिए, जैसा कि दूसरों के लिए मूल्य प्रस्तुत करने में होता है, उपयोग मूल्य ही नहीं बल्कि सामाजिक उपयोग मूल्य भी प्रस्तुत करने पर ही कोई वस्तु अस्तित्व में आती है (कैल्हॉन, मूडी, पैफ, श्मिट, एवं वर्क 2002: 47)। मूल्य किसी वस्तु में नहीं पाया जाता। यदि उत्पन्न की जाने वाली कोई वस्तु अनुपयोगी हो तो उसका कोई मूल्य नहीं होगा और उस पर व्यय किया गया श्रम व्यर्थ ही कहलाएगा।

प्रयोज्य श्रम सरल उपयोग मूल्य सृजित करता है। मेजपोश और पोशाक जैसी वस्तुएँ अपने विशिष्ट मूल्य दर्शाती हैं। जीवन निर्वाह करने के लिए प्रयोज्य श्रम और उत्पादन न जाने कब से होता आया है। केवल पूँजीवादी समाज में जहाँ विनिमय होता है, यह वस्तु का रूप ले लेता है। किसी भी पूँजीवादी समाज में प्रयोज्य श्रम किसी वस्तु में बदल दिया जाता है। दूसरी ओर, किसी भी सामंतवादी समाज अथवा जनजातीय समाज में विनिमय की कोई व्यवस्था नहीं होती और प्रयोज्य श्रम वस्तु का रूप नहीं ले पाता। प्रयोज्य श्रम उत्पादन संबंधी क्रियाकलाप में संलिप्त होने और किसी वस्तु में सरल उपयोग मूल्य सृजित करने हेतु मानव श्रम की क्षमता को इंगित करता है। मेजपोश और पोशाक दोनों ही वस्तुएँ हैं, जो कि किसी निश्चित लक्ष्य को लेकर किए गए उत्पादन संबंधी क्रियाकलाप और कुछ निश्चित उत्पादन साधन अपनाए जाने का परिणाम होती हैं।

इन वस्तुओं का उत्पादन करने हेतु वांछित श्रम, कौशल एवं क्षमताओं, यथा बुनाई व सिलाई जैसे क्रियाकलापों, के बीच कुछ गुणात्मक भिन्नता देखी जाती है। प्रयोज्य श्रम गुणात्मक रूप से भिन्न होता है और भिन्न–भिन्न वस्तुओं में भिन्न–भिन्न उपयोगिताओं को जन्म देता है। केवल जब प्रयोज्य श्रम, न कि महज श्रम, किसी वस्तु पर व्यय किया जाता है तभी उस वस्तु में उपयोग मूल्य सृजित होता है।

2.4 वस्तुओं का विनिमय मूल्य

किसी भी सामंतवादी समाज में उत्पादन उपयोग और उपभोग के लिए ही होता है। ऐसे समाजों में वस्तुएँ केवल उपयोग मूल्य दर्शाती हैं। विनिमय मूल्य विकसित अर्थव्यवस्थाओं में पूँजीवादी समाज के रूप में उभरते हैं, जहाँ वस्तुएँ बाजार में खरीदी और बेची जाती हैं। विनिमय मूल्य को किसी अन्य वस्तु के मात्रात्मक अनुपात के मूल्य के रूप में निरूपित की जाने वाली किसी वस्तु के निश्चित मात्रात्मक अनुपात की क्षमता के रूप में दर्शाया जाता है। उदाहरण के लिए, एक किलोग्राम चाय की पत्ती को 8 किलोग्राम चीनी के मूल्य में निरूपित किया जा सकता है। अतएव, किन्हीं दो भिन्न वस्तुओं के बीच कोई सामान्य तत्व पाया जाता है और उनके मूल्य विनिमय में सपरिणाम होते हैं। अब जो सामने आता है उसे 'विनिमय में मूल्य' कहा जाता है (मॉरिसन 1995: 61)।

जब वस्तुओं को विनिमय में मूल्यों द्वारा निरूपित किया जाता है तो उनका उपयोग मूल्य नगण्य हो जाता है। सभी वस्तुओं में कोई सर्वमान्य आधार पाया जाता है जो केवल मात्रात्मक मापदंडों से निरूपित किया जाता है। ऐसा इसलिए है कि एक वस्तु को अब केवल किसी अन्य वस्तु से ही बदला जा सकता है। साथ ही, पूँजीवादी समाजों में जब हम मूल्य की बात करते हैं तो हमारा अभिप्राय सारतः उस परिमाण से होता है जिसमें कि किसी समीकरण के माध्यम से और किसी अन्य वस्तु के मात्रात्मक अनुपात के मान के अनुसार किसी वस्तु के मात्रात्मक अनुपात को निरूपित किया जा सकता है।

इसके अलावा, विनिमय मूल्य पूँजीवादी समाजों में सभी सामाजिक संबंधों को आकार देता है। किसी भी वस्तु का विनिमय मूल्य आकस्मिक होता है और समय व स्थान के साथ बदल जाता है। मार्क्स का मानना था कि वास्तव में वस्तुओं की तुलना नहीं की जा सकती क्योंकि हर वस्तु कोई विशिष्ट गुण रखती है और कोई अनुपम प्रकार्य करती है। वह इस बात से सहमत नहीं थे कि वस्तुओं को विनिमय के अनुरूप बनाने के लिए विभिन्न प्रकार की वस्तुओं के बीच विद्यमान सभी उपयोगी भेद मिटा दिए जाएँ।

वस्तु विनिमय के तीन परिणाम निम्नवत् देखे जाते हैं –

प्रथम, जब किसी वस्तु को विनिमय के अधीन लाया जाता है तो उसे उसके प्रयोग से पृथक किया जाता है। मात्रात्मक मापदंडों के आधार पर वस्तु का मूल्य निर्धारित करने के लिए कोई सामान्य आधार तलाशा जाता है। विनिमय में इसी कारण किसी वस्तु व उसके उपयोग मूल्य के बीच गुणात्मक भेद खिसककर पार्श्व में चला जाता है।

दूसरे, पूँजीवादी उत्पादन में विनिमय विभिन्न वस्तुओं पर व्यय किए गए विभिन्न प्रकार के श्रम के बीच भेद मिटाए जाने की ओर अग्रसर करता है। मार्क्स का मानना था कि पोशाक सिलने वाले किसी दर्जी का कौशल और क्षमताएँ जूते गाँठने वाले किसी मोची के कौशल और क्षमताओं से भिन्न होते हैं। उनके अनुसार, श्रम के विविध प्रकार विभिन्न उपयोग मूल्यों को जन्म देते हैं। दर्जी और मोची दोनों को क्रमशः पोशाक और जूता बनाने के लिए वांछित श्रम समय के अनुसार पारिश्रमिक दिया जाता है। अतएव, पोशाक और जूता बनाने के लिए वांछित श्रम समय के अनुसार ही क्रमशः दर्जी और मोची के विशिष्ट श्रम कार्यों की तुलना की जाती है। श्रम की मात्रा उसकी अवधि से मापी जाती है जो कि उसका श्रम समय होता है।

विनिमय मूल्य का **तीसरा** परिणाम सामाजिक संबंधों पर उसका प्रभाव होता है। मार्क्स ने कहा कि पूर्व समाजों के विपरीत, जहाँ व्यक्ति स्वयं ही मूल्यवान होता है, पूँजीवादी समाजों में सभी संबंध क्रय–विक्रय के अधीन होते हैं और वस्तुओं का मूल्य बाजार में प्रवेश करने की उनकी क्षमता से आँका जाता है अर्थात् पूँजीपति और श्रमिक के बीच का संबंध श्रमिक के श्रम के विनिमय मूल्य से तय होता है। श्रमिक को पारिश्रमिक दिया जाता है और वही उसके श्रम की कीमत होती है।

किसी भी पूँजीवादी समाज में पूँजीपति श्रमिक का शोषण करता है क्योंकि पूँजीपति ही बाजार में वस्तुओं के विनिमय में सहभागी होता है। श्रमिक, दूसरी ओर, अपनी श्रमशक्ति अर्थात् अपनी कार्यक्षमता का विक्रय करता है और उत्पादन में मूल्य का सृजन करता है। वह अपने भरण–पोषण के लिए केवल पारिश्रमिक पाता है। यह पारिश्रमिक उसके द्वारा सृजित मूल्य से कम ही होता है और इस प्रकार वह शोषण का शिकार होता है।

राजनीतिक अर्थशास्त्री रिकार्डो और स्मिथ के अनुसार, किसी वस्तु पर श्रम की मात्र एक ही किस्म खर्च की जाती है। मार्क्स का कहना है कि 'श्रम का दोहरा चरित्र' होता है जो कि किसी वस्तु में सन्निहित पाया जाता है। श्रम के वे दो प्रकार जो किसी वस्तु पर व्यय किए जाते हैं, होते हैं – प्रयोज्य श्रम और अमूर्त श्रम। मार्क्स सवाल करते हैं कि पूँजीवादी समाज में पोशाक और कपड़े के मूल्य अलग–अलग कैसे हुए? दूसरे शब्दों में, यदि कोट और कपड़े सरल उपयोग मूल्यों को दर्शाते हैं और गुणात्मक रूप से अपने–अपने विशिष्ट श्रम का उत्पाद होते हैं तो उनका विनिमय मूल्य भिन्न कैसे हुआ? ऐसा इसलिए है कि पूँजीवादी समाज में किसी भी वस्तु पर लगाई गई ऊर्जा के केवल शारीरिक व्यय को ही ध्यान में रखा जाता है।

विभिन्न प्रकार के श्रम, कौशल व क्षमताओं तथा उपयोगी श्रम के उद्देश्यों के बीच गुणात्मक भिन्नता से लेकर ऊर्जा के शारीरिक व्यय के किसी मात्रात्मक मापदंड की ओर झुकाव देखा जाता है। किसी मात्रात्मक मापदंड तक का यह बदलाव उपयोगी श्रम से अमूर्तीकरण की ओर प्रवृत्त करता है क्योंकि विभिन्न प्रकार के प्रयोज्य श्रम में किसी तुलनीय वस्तु पर ही ध्यान केन्द्रित होता है। अमूर्त श्रम केवल पूँजीवादी समाजों में ही देखा जाता है क्योंकि इसे श्रम समय की अवधि के पदों में मापा जाता है। अतः पोशाक की कीमत मेजपोश की कीमत से दुगनी बैठती है क्योंकि उसके सृजन में श्रम समय की कहीं बड़ी अवधि लगी होती है। दूसरी ओर, पोशाक और कपड़ा तैयार करने में लगे प्रयोज्य श्रम का मूल्य गुणात्मक रूप से भिन्न होता है और उन दोनों में सन्निहित श्रम समान रूप से मूल्यवान होता है। किसी वस्तु पर व्यय प्रयोज्य श्रम से एक प्रकार का सामान्यीकरण देखने में आता है। इसे अमूर्त श्रम कहा जाता है, जो कि वस्तुओं के विनिमय मूल्य का आधार बनता है।

2.5 मूल्य का उद्‌गम और मूल्य रूप

राजनीतिक अर्थशास्त्रियों एडम स्मिथ और डेविड रिकार्डो के अनुसार, वस्तुएँ इसलिए मूल्यवान होती हैं कि उनमें श्रम सन्निहित होता है। मार्क्स स्मिथ और रिकार्डो के विचार से प्रभावित हुए और इस विचार की आगे विवेचना की। उन्होंने विश्लेषण कर बताया कि किस प्रकार मूल्य किसी वस्तु के साथ अपरिहार्य रूप से जुड़ जाता है और किस प्रकार एक वस्तु का मूल्य किसी अन्य वस्तु के संबंध में व्यक्त किया जाता है।

उनके अनुसार, किसी भी दवा-विक्रेता ने कभी यह सिद्ध नहीं किया कि किसी भी वस्तु (दवा) में एक पदार्थ होता है जो उसके मूल्य का स्रोत होता है। मार्क्स ने कहा कि किसी वस्तु का मूल्य उसका कोई जन्मजात हिस्सा नहीं होता। मूल्य का उद्‌भव सामाजिक संबंधों की एक ऐसी व्यवस्था से होता है जिसमें एक वस्तु को अन्य वस्तुओं के संबंध में रखकर देखा जाता है और एक वस्तु की तुलना किसी अन्य वस्तु से की जाती है। किसी भी वस्तु का यह पहलू किसी 'मूल्य रूप' में निहित होता है। यह मूल्य रूप विनिमय मूल्य की भाँति नहीं होता। किसी भी पूँजीवादी समाज में एक वस्तु के मूल्य का निर्धारण किसी अन्य वस्तु के संबंध में तुलना करके तय किया जाता है (मॉरिसन 1995: 69)।

मार्क्स के अनुसार, वह उभयनिष्ठ पदार्थ जो वस्तुओं को विनिमय के अधीन लाए जाने पर प्रकट होता है, ही उनका मूल्य होता है। किसी भी वस्तु का वह मूल्य जो अन्य वस्तुओं से उसके संबंध से निर्धारित किया जाता है, सापेक्ष मूल्य कहलाता है (मॉरिसन 1995: 70)। किसी वस्तु का मूल्य तब प्रकट होता है जब मूल्य के सापेक्ष और समतुल्य रूप आमने–सामने होते हैं और किसी तुलना से गुजरते हैं।

एलन कार्लिंग के अनुसार, मार्क्स का तात्पर्य यह है कि कपड़े जैसी कोई वस्तु का अपना मूल्य तब तक नहीं जानती जब तक कि वह पोशाक के आईने में अपना अक्स नहीं देख लेती – जब तक कि वह स्वयं को किसी पोशाक के रूप में नहीं देख लेती (मॉरिसन 1995: 71)।

प्रथम वस्तु, यथा कपड़ा, मूल्य के सापेक्ष रूप में एक सक्रिय भूमिका निभाती है, जबकि दूसरी वस्तु, यथा पोशाक, एक निष्क्रिय भूमिका निभाती है और कपड़े के मूल्य का समतुल्य रूप निरूपित करती है। मूल्य के ये समतुल्य संबंध परस्पर विरोधी होते हैं और फिर भी मूल्य के दोनों रूप एक दूसरे से विनिमय कर सकते हैं, और यही मार्क्स के अनुसार एक महत्वपूर्ण मूल्यांकन का क्षण होता है।

2.6 वस्तुओं का जड़वस्तुवाद

'अंधभक्ति या जड़पूजा इस धारणा के साथ किसी जड़वस्तु के प्रति असाधारण समर्पण भाव दर्शाना है कि उसमें विलक्षण शक्तियाँ हैं' (मॉरिसन 1995: 72)। जैसा कि हमने ऊपर पढ़ा, वस्तुएँ केवल प्रयोज्य श्रम द्वारा सृजित उपयोग मूल्य ही दर्शाती हैं और किसी भी वस्तु में ऐसे पदार्थ का एक अणु भी नहीं पाया जाता जो मूल्यवान हो। पूँजीवादी समाजों में ऐसा माना जाता है कि वस्तुएँ अपने आप में मूल्यवान होती हैं और वे विलक्षण शक्तियाँ भी रखती हैं (उदाहरण के लिए, उदारीकृत जगत् में समाज के कुछ वर्गों द्वारा उपभोग की ब्रांडेड वस्तुओं का प्रयोग इस धारणा की वजह से किया जाता है कि ब्रांडेड वस्तुओं में विलक्षण शक्तियाँ होती हैं जो कि उन गैर–ब्रांडेड वस्तुओं में नहीं होतीं जो उत्तम गुणवत्ता वाली हो सकती हैं)।

मार्क्स ने रिकार्डो और स्मिथ जैसे राजनीतिक अर्थशास्त्रियों की आलोचना की, जो कि यह मानते थे कि वस्तुएँ मूल्यों की धारक होती हैं। साथ ही, ये राजनीतिक अर्थशास्त्री इस बात की विवेचना नहीं करते थे कि किसी पूँजीवादी समाज में एक सामाजिक संबंधों वाली व्यवस्था में वस्तुएँ विनिमय मूल्य कैसे धारण कर लेती हैं। मार्क्स ने कहा कि जब वस्तुएँ विनिमय संबंधों की किसी व्यवस्था में प्रवेश करती हैं तो उन्हें विलक्षण

शक्तियाँ रखने वाली माना जाता है और बाजार एक पूँजीवादी समाज में बदल जाता है।

वस्तुएँ विनिमय मूल्य के संबंध में विलक्षण शक्तियाँ रखती हैं, न कि उपयोग मूल्य के संबंध में। ऐसा इसलिए है कि उपयोग मूल्य धारक के रूप में वस्तुएँ मात्र मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं और उपयुक्त मानव श्रम की उत्पाद होती हैं। ऐसा तब होता है जब सामाजिक संबंध किसी ऐसे पूँजीवादी समाज में विकसित हो जाते हैं कि लोग धारणा बना लेते हैं कि मूल्य वस्तु का ही एक हिस्सा होता है और वस्तु विलक्षण शक्तियाँ प्रकट करती है।

पूँजीवादी समाजों में वस्तुओं के जड़वस्तुवाद को स्पष्ट करने के लिए मार्क्स ने ऐसे जनजातीय समाजों से समरूपता विकसित की जहाँ लोग यह मानते थे कि कुछ वस्तुएँ जादुई शक्तियाँ रखती हैं। मार्क्स ने कहा कि किसी भी वस्तु में अन्तर्जात कोई जादुई शक्ति नहीं होती। किसी वस्तु में विलक्षण शक्तियाँ होने संबंधी धारणा व्यक्ति का उस वस्तु विशेष से संबंध होने की वजह से पनपती है जो किसी सामाजिक संरचना का ही हिस्सा होती है। पूँजीवाद में यह धारणा कि वस्तुएँ विलक्षण शक्तियाँ रखती हैं, 'वस्तुओं का जड़वस्तुवाद' कहलाती है।

बोध प्रश्न 1

उपयुक्त शब्द प्रयोग कर रिक्त स्थान भरें –

1) पूँजीवादी समाज में कोई वस्तु तब सामने आती है जब न केवल उपयोग मूल्य बल्कि ..... भी प्रस्तुत किया जाता है।

2) विनिमय मूल्य का अर्थ होता है – किसी अन्य वस्तु के किसी .... मूल्य में निरूपित की जाने वाली किसी वस्तु के निश्चित मात्रात्मक अनुपात की क्षमता।

3) अमूर्त श्रम ..... की अवधि में मापा जाता है। ..... . श्रम सरल उपयोग मूल्य सृजित करता है।

2.7 वस्तुओं का परिचालन

पूँजीवाद में वस्तुओं को कोई विनिमय प्रणाली अपनानी होती है। सामंतवाद जैसे उत्पादन के प्राचीन स्वरूपों में उत्पादन मुख्यतः प्रयोग के लिए ही होता है और उसे सामाजिक उत्पादन माना जाता है। आम तौर पर सामाजिक संबंध व्यक्तियों के बीच होते हैं, परंतु 'वस्तुओं के जड़वस्तुवाद' की स्थिति में लगता है कि उक्त संबंध वस्तुओं के बीच हैं, न कि व्यक्तियों के बीच। पूँजीवाद में यही संबंध विनिमय का रूप ले लेते हैं। अब क्रय–विक्रय, उत्पादन, उपभोग आदि सभी क्रियाकलाप निजी लाभ के लिए होते हैं। सामाजिक संबंधों पर विनिमय का प्रभुत्व हो जाता है और लोग एक दूसरे के सामने वस्तुओं के क्रेता, विक्रेता, उत्पादक व उपभोक्ता के रूप में आने लगते हैं (मॉरिसन 1995: 75)।

व्यक्ति अब बाजार में परिचालित वस्तुओं के धारक स्वरूप किसी विनिमय प्रणाली में संलग्न हो जाते हैं। वस्तुओं को पहले से अधिक मूल्यवान माना जाने लगता है। वस्तुओं में मानो मानव सरीखे गुण समाहित हो जाते हैं। यही होता है वस्तु का

जड़वस्तु रूप, जो फिर एक दूसरे के साथ सामाजिक संबंधों में अपनी पैठ बना लेता है। लोगों के बीच संबंध भौतिक संबंधों का रूप ले लेते हैं क्योंकि वे अब वस्तुओं के धारक मात्र होते हैं। वस्तुएँ, दूसरी ओर, विनिमय संबंध बना लेती हैं और मूल्य निर्धारक हो जाती हैं। वस्तुओं के महज धारक स्वरूप उत्पादन में व्यक्ति का मानव स्वरूप धुँधला पड़ जाता है।

2.8 अधिशेष मूल्य का सिद्धांत

पूँजीवादी समाजों में सभी वस्तुओं के साथ–साथ कर्मचारी के श्रम के लिए भी बाजार होता है। कर्मचारी की सेवाओं के बदले पूँजीपति उसे कोई कीमत चुकाता है अथवा वेतन का भुगतान करता है। कार्य करने की कर्मचारी की क्षमता 'श्रम शक्ति' कहलाती है, जो कि किसी कीमत पर पूँजीपति द्वारा खरीद ली जाती है। यह श्रम शक्ति उस श्रम से भिन्न होती है जिसे श्रम का शारीरिक कृत्य कहा जाता है। पूँजीपति श्रम शक्ति खरीदता है और कर्मचारी का भुगतान पारिश्रमिक के रूप में करता है। यह पारिश्रमिक या वेतन कर्मचारियों के भरण–पोषण के लिए होता है और ऐसे कर्मचारियों की एक नयी पीढ़ी तैयार करने के लिए भी जो पूँजीपति के लिए मूल्यवान होंगे (ह्यूज, शैरॉक, एवं मार्टिन 2003: 64)। श्रम का विनिमय मूल्य पूँजीपति द्वारा कर्मचारी को चुकाई गई कीमत या पारिश्रमिक ही होता है। श्रम का उपयोग मूल्य कार्याधीन वस्तुओं का मूल्यवर्धन करने के उद्देश्य से कर्मचारी की क्षमता को इंगित करता है। कर्मचारी का श्रम उत्पादन प्रक्रिया में कच्चे माल को उपयोगिता की वस्तुओं में बदल देता है।

मार्क्स का कहना है कि वस्तु का मूल्यवर्धन करने की कर्मचारी की क्षमता, यथा श्रम का 'उपयोग मूल्य' श्रम के 'विनिमय मूल्य', यथा पूँजीपति द्वारा कर्मचारी को चुकाई गई कीमत या पारिश्रमिक से, अधिक ही होता है। मूल्य में यह भिन्नता अधिशेष मूल्य निरूपित करती है जो कि पूँजीपति द्वारा विनियोजित की जाती है और वह उसके लिए लाभ का स्रोत भी बनती है। यहाँ यह स्पष्ट कर देना उचित ही होगा कि 'अधिशेष मूल्य' लाभ नहीं होता क्योंकि उत्पादित माल को बाजार में बेचना पड़ता है जिसमें वितरण लागत भी लगती है। पूँजीपति ही श्रम के उत्पाद का मालिक बन बैठता है और उत्पादन एवं वितरण लागत में कमी होने पर लाभ हड़प लेता है। मार्क्स के अनुसार, पूँजीपति और श्रमिक के बीच का संबंध अंतर्जात रूप से शोषक होता है और श्रमिक को मनुष्यत्व विहीन कर दिया जाता है।

बोध प्रश्न 2

1) पूँजीवादी समाजों में वस्तुओं के विनिमय से क्या परिणाम सामने आते हैं? वर्णन करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) पूँजीवादी समाजों में 'वस्तुओं का जड़वस्तुवाद' क्या है? स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2.9 सारांश

इस इकाई में हमने पूँजीवादी समाज में वस्तु की संकल्पना पर चर्चा की। हमने जाना कि सामंतवादी समाज, जहाँ उत्पादन इस्तेमाल के लिए होता है, के विपरीत पूँजीवादी समाज में उत्पादन बाजार में वस्तुओं का विनिमय करने के लिए किया जाता है। अतएव, पूँजीवादी समाज में वस्तुओं के दो कारक सामने आते हैं – उपयोग मूल्य और विनिमय मूल्य। जब हम वस्तुओं के उपयोग मूल्य की बात करते हैं तो वस्तुओं के बीच गुणात्मक भेद को ध्यान में रखा जाता है। विनिमय मूल्य, दूसरी ओर, उपयोग मूल्य से ही निष्कर्षित हो सामान्यीकृत होता है और इसमें वस्तुओं के बीच मात्रात्मक भेद को ध्यान में रखा जाता है।

वस्तुओं के जड़वस्तुवाद का अर्थ यह होता है कि पूँजीवादी समाज में वस्तुएँ असाधारण शक्ति रखती हैं, जिसकी वजह से यह अपरिहार्य हो जाता है कि लोगों के बीच संबंधों को पहले से अधिक भौतिक या पदार्थ रूप में देखा जाने लगता है, जैसे बाजार में क्रेता, विक्रेता, उपभोक्ता, उत्पादक आदि। मानो सामाजिक संबंध वस्तुओं के बीच हैं, न कि मनुष्यों के बीच।

2.10 संदर्भ

कैल्हॉन, सी., जे. गर्टाइस, जे. मूडी, एस. पैफ, के. श्मिट, एवं इंद्रमोहन वर्क (2002), *क्लासिकल सोशिऑलजिकल थ्योरी.* यूएसए : ब्लैकवैल पब्लिशर्ज।

ह्यूज, जॉन ए., वैस शैरॉक, एवं पीटर जे. मार्टिन (2003), *अण्डरस्टैंडिंग क्लासिकल सोशिऑलजी : मार्क्स, वेबर, दर्खाइम,* लंदन : सेज।

मार्क्स, कार्ल 1867. *कैपिटल वॉल्युम – I* यहाँ से रिट्रीव करें – https://www.marxists.org/archive/marx/works/1867-c1/ch01.htm

मॉरिसन, के. (1995), *मार्क्स, वेबर, दर्खाइम : फॉर्मेशन ऑफ मॉर्डन सोशल थॉट.* लंदन : सेज।

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) सामाजिक उपयोग मूल्य

2) मात्रात्मक अनुपात

3) श्रम समय

4) प्रयोज्य श्रम

बोध प्रश्न 2

1) पूँजीवाद के विकास और वस्तुओं के विनिमय संबंधी कुछ परिणाम विशेष देखने में आए हैं। प्रथम, विनिमय निर्धारित करते समय वस्तुओं के उपयोग मूल्यों के बीच मात्रात्मक भेद खिसककर पीछे चला जाता है। विनिमय में जोर किसी वस्तु के ऐसे समतुल्य संबंध पर दिया जाता है जो सभी वस्तुओं में पाया जाता हो। वस्तुओं के प्रयोग से कोई मूर्त रूप सामने आता है। यह सर्वसामान्य समतुल्य संबंध ही किसी वस्तु अथवा श्रम समय पर व्यय समय की अवधि होता है। दूसरे, श्रम के विभिन्न प्रकारों के बीच गुणात्मक भेद पर विचार नहीं किया जाता, जैसे सिलाई और बुनाई के बीच भेद। तीसरे, वस्तुओं का विनिमय पूँजीवादी समाज में सामाजिक संबंधों में बदलाव ले आता है, जहाँ समाज में लोगों की पदस्थिति अब निजी उत्पादों को विनियोजित करने और बाजार में प्रवेश करने की उनकी क्षमता पर निर्भर करने लगती है।

2) पदबंध 'वस्तुओं का जड़वस्तुवाद' से तात्पर्य है – लोगों की ऐसी धारणाएँ कि पूँजीवादी समाजों में कुछ वस्तुएँ विलक्षण शक्तियाँ अथवा मनुष्य सरीखे गुणधर्म रखती हैं। इसी प्रकार, जनजातीय समाजों में कुछ वस्तुएँ जादुई शक्तियाँ रखने वाली मानी जाती हैं।

   मार्क्स का कहना है कि जड़ वस्तुएँ कोई शक्तियाँ नहीं रखतीं बल्कि लोगों की धारणाएँ ही उनके दिमाग में यह भ्रांति पैदा कर देती हैं कि जड़ पदार्थ शक्तियाँ रखते हैं। ऐसा तब होता है जब सामाजिक संबंध किसी पूँजीवादी समाज में पनपते हैं और लोग यह मानते हैं कि मूल्य वस्तु का ही कोई हिस्सा है और वस्तु असाधारण शक्तियाँ प्रकट करती है। जड़वस्तु कोई ब्रांडिड कलाई घड़ी हो सकती है बशर्ते उसे असाधारण और समाज में कोई समतुल्य संबंध स्थापित करने में सक्षम समझा जाता हो।